

सत्ता तंत्र में कमाई जनता, क्या है तेरी राय?

लीना मेहंदले

मेरी एक प्रिय कहानी है - पुनर्मूषकोभव। पुरानी कहानी की ही स्टाईल में इसमें भी एक चूहा है - जो गरीब, उत्पीड़ित और शोषित जनता का प्रातिनिधिक रूप है। महर्षि मतदाता की कृपा से वह बिल्ली, बिल्ली से कुत्ता, फिर भेड़िया और शेर बन जाता है तो महर्षि पर ही आक्रमण कर देता है। महर्षि मतदाता उसे पुनर्मूषकोभव का शाप देकर फिर से सत्ताविहीन बना देते हैं। लेकिन दहाड़ लगाकर महर्षि पर कूदने वाला शेर चूहा बनकर जब जमीन पर आ गिरता है तो एक बिलाव उसे दबोच लेता है। लेकिन उलट पुलट कर देखने के बाद उसे बिलाव छोड़ देता है। क्यों?

इसलिए कि वह बिलाव भी मतदाता की कृपा से "बिल्ली पद" तक चढ़ा है। उसे पता है कि कल वह भी ज्यादातियाँ करेगा और मतदाता उसे भी यूँ ही जमीन पर पटक देंगे। सत्ता के दौरान की गई ज्यादातियों की सजा भुगतने का सिलसिला यदि आज इस मूषक के बहाने शुरू हो गया तो कल उसकी ज्यादातियों के लिये उसको भी सजा मिल सकती है। सो आज ही इस सिलसिले को रोकना होगा चाहे महर्षि मतदाता नाराज होते रहें।

यह कहानी पढ़ी तो याद आई कि कैसे तत्कालिन मुख्यमंत्री अंतुले के द्वारा किये तथाकथित आर्थिक दुर्व्यवहार और अद्वैत कमाई के आरोपों को लेकर महाराष्ट्र में सनसनी फैली थी। पत्रकारों ने बड़ी मेहनत से कई बातें जनता के सामने लाई। फिर भी राज्यपाल ने एफआईआर दर्ज कराने की अनुमति नहीं दी तो न्यायाधीश लेंटिन के सामने यह जाँचने के लिए सुनवाई हुई क्या सरकारी फाइलों और टिप्पणियों की जाँच के बाद प्रथम-दर्शनी मुद्दे नजर आती हैं जिन्हें देखकर उन आरोपों के सही होने की संभावना नजर आती है। सुनवाई के बाद लेंटिन साहब ने कहा - जी हाँ है, और आय अम शॉकड। अंतुले ने मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा दिया।

मुकदमा दर्ज हुआ तो कानूनी दावपेचों का सहारा लेते हुए एक - एक कर कई उलझाऊ मुद्दे उठाते रहे और उनकी सुनवाई को सुप्रीम कोर्ट तक खींचते रहे। आखिरकार चौदह वर्ष बीत गए। सुप्रीम कोर्ट ने कहा - बस केवल मुख्य मुद्दे की सुनवाई हो। यूँ चौदह वर्षों के बाद मुख्य आरोपों की सुनवाई शुरू हुई। यह संभव हुआ हमारी न्याय व्यवस्था के चलते और ऐसा भी नहीं कि वे सारे वर्ष अंतुले ने चिंता में न बिताए हो। बाद में सबूतों के अभाव में अंतुले निर्दोष ठहराये गये। कौन नहीं जानता कि चौदह वर्षों में सरकारी कागजों की क्या-क्या गत बनती है।

चुनाव लड़कर सत्ता पाने वाले व्यक्ति को आर्थिक कमाई करनी चाहिये या नहीं? क्या राय है जनता की? चुनाव लड़ने की लागत सरपंच के लिये पांच-दस लाख और लोकसभा उम्मीदवार के लिये दो-तीन करोड़ भी हो सकती है। इतनी लागत से सत्ता जीतने के बाद लागत की वसूली में यदि न्यायोचित साधन (यथा - तनख्वाह) पूरे न पड़ते हों तो अनुचित साधनों का सहारा लिया जाए या नहीं? जनता क्या कहती है? यदि किसी ने चुनाव अभियान में एक करोड़ रुपये खर्च कर दिये हो तो पांच वर्षों में उसके पैसों की वसूली तो होनी चाहिये कि नहीं? फिर अगला चुनाव लड़ने के लिये कुछ "अतिरिक्त कमाई" भी करनी चाहिये कि नहीं? जनता क्या कहती है? आने वाली सात पुश्तों का खर्चा चलने लायक धन कमाना यदि चुनावी उम्मीदवार की मजबूरी है तो वह पहले धन कमाये या उचित-अनुचित सोचे? जनता क्या कहती है?

आज इन सारे प्रश्नों का हल ढूँढ़ने की कोशिश कर रहे हैं सुप्रीम कोर्ट और चुनाव आयोग। लेकिन मुझे लगता है कि शायद उन्होंने इश्यूज को भी ठीक तरह से पेश नहीं किया है। असल मुद्दे तो दो हैं - क्या चुनावी लागत की ओर देखते हुए हमें आर्थिक घपलों को कानूनन स्वीकार कर लेना चाहिए? या जब आर्थिक मुद्दों के केस उठते हैं तो उनकी उनकी अविलम्ब ताबड़तोड़ सुनवाई करनी चाहिए? लेकिन शायद उन्होंने सोचा है कि मुख्य मुद्दा बहुत गरम है, सो उन्होंने उसे बाहर - बाहर से छेड़ने का प्रयत्न किया है, जैसा कि हम थाली में परोसे गये गरम भात के साथ करते हैं।

अंतुले की सुनवाई में यह दिखा कि सत्ता स्थान पर रहते हुए लगे वे आर्थिक दुर्व्यवहार के आरोपों की सुनवाई लंबी खिंचती जाती है और निष्प्रभ हो जाती है, तो सबकी साँस में साँस आई। फिर तो ऐसे कितने ही केस आए - जहाँ आर्थिक भ्रष्टाचार के और पिछतरगी के आरोप लगे और कोर्ट में खिंचते गये - जिनका कौन

करुणानिधी, बंगारू लक्ष्मण , जया जेटली, सतीश शर्मा, जयललिता , सुखराम.... कितने ही नाम गिनाए जा सकते हैं।

महाराष्ट्र के एक मंत्री थे जिनकी अपार संपत्ति की काफी चर्चा थी। उनका बचपन आर्थिक विपन्नता में गुजरा था। उस जमाने से उन्हें पहचानने वाले लोग भी मौजूद थे। सवाल उठता है कि उन्होंने इतनी संपत्ति कैसे पाई? जाहिर है अनथक मेहनत से। लेकिन कैसी मेहनत ? आज हमारे समाज में लाखों बेकार नवयुवक घूम रहे हैं जो अनथक मेहनत से नहीं डरते । लेकिन उनकी समस्या है। कोई भी काम चुनो और अनथक मेहनत से भिड़ जाओ तो अच्छा पैसा कमा सकते हो, वाला समीकरण इस देश में नहीं है। लोग यह मानते हैं कि अकूत पैसा कमाने के लिए अनथक मेहनत के साथ आर्थिक घपले और रिश्वतखोरी भी आवश्यक है। यदि किसी ने इनके बिना अच्छे काम के आधार पर अच्छी खासी कमाई की हो, तो उस यशोगाथा को हमारे नवयुवक जानना चाहेंगे और उन्हीं नक्शे-कदमों पर चलना चाहेंगे। सो साहब जनता हर हालत में अकूत संपत्ति कमाने के तंत्र को समझना चाहती है।

लिहाजा किसी ने उनपर भ्रष्टाचार कर आरोप लगाया - अनशन किया - जाँच कमेटी लगवाई। उसकी रिपोर्ट आई - आरोप निराधार पाये गये - कहा गया कि मंत्री काल में उनकी संपत्ति में कोई अनाकलनीय वृद्धि नहीं हुई है। लोग भौंचक।

धीरे धीरे पता चला कि यह महाशय पहले कारपोरेटर रहे थे और कमेटी के सामने दावा किया कि वह सारी संपत्ति उन्होंने उस दौर में कमाई है - और चूँकि जाँच केवल मंत्रीपद के कार्यकाल के लिए है - अतः उन्हें भ्रष्ट नहीं माना जा सकता। लेकिन जब जाँच का परिणाम जनता के सम्मुख रखा गया तो इस बात को छिपाया गया है कि जाँच करने वालों ने उनके कारपोरेटर कालीन संपत्ति की जाँच नहीं की थी। लिहाजा वह आज भी जनता के बीच दावा करते फिरते हैं कि उनकी सारी संपत्ति क्लीन है। इसी तरह का किस्सा दूसरी बार उठा जब दावा किया गया कि राबड़ी देवी ने एक गाय की सेवा की - जो उन्हें शादी के समय मैके से दहेज के रूप में मिली थी। उसी गाय के दूध, दही इत्यादि से उन्हें इतनी कमाई हुई जिसे बुरी नजर वाले चारा घोटाले की कमाई बता रहे हैं।

इसीलिये सुप्रीम कोर्ट ने यह तय किया कि चुनाव लड़ने वालों पर बंधन लगाया जाये कि वे अपनी संपत्ति की घोषणा कर जनता को बतायेंगे। चुनाव आयोग ने भी मामले की गहराई समझते हुए तुरंत इस तरह का नियम बना दिया। चुनाव आयोग ने कहा कि कोई व्यक्ति जब नामांकन पत्र भरेगा तो उसे अपनी संपत्ति की घोषणा करनी पड़ेगी ताकि जनता को पता लगे। आखिर चुना जाने वाला व्यक्ति जनता के नाम पर ही तो सारे काम करता है - चाहे अच्छे काम करे या बुरे।

अब जाकर सांसदों को लगा कि अरे, यह चर्चा या कानून तो हमें बनाना चाहिये - अब सारे पक्ष और सारे सांसद मिल कर इसमें जुटे हैं। अखबारों से पता चलता है कि वे सभी इस बात को राजनीति के अपराधीकरण के मुद्दे से जोड़ रहे हैं । दावा कर रहे हैं कि आर्थिक दुर्व्यवहार भला कोई अपराध है ? असली अपराध तो हैं गुण्डागर्दी, अगवा करना या हत्या जैसे अपराध। उनकी ओर ध्यान देना चाहिए ताकि वैसी पार्श्वभूमि के लोग राजनीति में न आ सके। रही आर्थिक कमाई की बात - तो केवल वही व्यक्ति अपनी संपत्ति की घोषणा करेगा जो चुनाव जीतेगा।

इस बात को समझना होगा कि चुनाव आयोग के प्रस्ताव और सांसदों के प्रस्ताव में अंतर है - चुनाव आयोग कहता है कि जो भी व्यक्ति मत माँगने के लिए जनता के पास जाना चाहता है, वह पहले जनता को अपनी आर्थिक संपत्ति बतायेगा और फैसला जनता पर छोड़ेगा - चाहे उसे भ्रष्ट समझे या न समझे, चाहे उसे चुने या ना चुने। अर्थात् हर उम्मीदवार की संपत्ति भी चुनावी मुद्दा बनेगी। वो कल चुनाव जीतकर राज करना चाहता है उसे जनता आज कह सकती है कि तुम पहले अपनी आर्थिक ईमानदारी की बात करो।

दूसरी ओर सांसदों की जो राय अखबारों में जाहिर हुई उसमें कहा गया है कि मतदान से पहले लोगों को यह बताना जरूरी नहीं कि किस किस उम्मीदवार के आर्थिक व्यवहार या संपत्ति कैसे हैं। केवल जीते हुए व्यक्ति ही यह ब्यौरा देंगे। वह भी चुनाव जीत जाने के बाद - अर्थात् जब मतदाता के हाथ से बाजी निकल चुकी होगी। फिर तो अगले चुनाव तक कोई परवाह नहीं जनता के विषय में सोचने की । जब तक वह आयेगा, तब तक जनता की याददाश्त एकदम फीकी पड़ चुकी होगी। मुझे पुणे लोकसभा चुनाव की एक मिसाल याद आती है । एक प्रशासकीय अधिकारी इस्तीफा देकर राजकीय क्षेत्र में कूद पड़ा। कईयों ने इसे स्टंट कहा। नामांकन के दिन उसने शपथ पत्र (अफेडेमेंट) पर अपना सांपत्तिक ब्यौरा दिया। गद्दी नहीं उसने ताटा किया कि हर दिन वह शाश्वतक प्रोषित

करेगा कि उसे चुनाव प्रसार के लिये किस - किस से आर्थिक सहायता मिली और उसने किस दिन कितना खर्च किया। विरोधी उम्मीदवारों को भी उसने ललकारा कि वह भी इसी प्रकार जनता को बतायें। हालाँकि दूसरे उम्मीदवारों ने ऐसा कुछ नहीं किया और उन्हीं में से एक दिग्गज उम्मीदवार जीत भी गये लेकिन जो मिसाल बनी वह यदि कई बार दुहराई गई तो निश्चय ही उसके अच्छे परिणाम निकलेंगे।

सुप्रीम कोर्ट और चुनाव आयोग की पहल भी इसी दिशा में है। लेकिन सवाल है कि जनता क्या चाहती है? सांसद कहते हैं - हमसे पूछो जनता क्या चाहती है क्योंकि जनता ने ही हमें जिताया है - हम जो भी कह रहे हैं, वह जनता की ही आवाज है। चुनाव आयोग कहता है - हमेशा जनता की आवाज हमें प्रतिनिधियों के ही मुँह से सुननी पड़ती है - जैसे भगवान की बात पुजारी के मुँह से ही सुनी जाती है। कभी तो हमें भी जनता की बात प्रत्यक्ष सुनने दो। वह मौका कब आयेगा ? जाहिर है कि ऐसा मौका केवल एक ही बार - केवल पंद्रह दिनों के लिये आता है जब चुनावी नामांकन पत्र भरे जा चुके होते हैं - प्रचार चल रहे होते हैं और जनता को अपना मत बनाने का मौका मिलता है। तर्कसंगत तो यही लगता है जो चुनाव आयोग कर रहा है। लेकिन.....जनता की राय क्या है?

(हिंदुस्तान)

पता लीना मेहेंदले, ई - १८, बापू धाम, सान मार्टिन मार्ग, चाणक्य पुरी, नई दिल्ली ११००२१